Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233

Year-3 | Continuous issue-12 | May-June 2014

अनुवाद : मौलिक ?

अनुवाद को सृजन की कोटि में रखा जाए या नहीं, यह बात हमेशा चर्चा का विषय रही है। अनुवादकर्म में रत अध्यवसायी अनुवादकों का मत है कि अनुवाद दूसरे दर्जे का लेखन नहीं, अपितु मूल के बराबर का ही सृजनधर्मी प्रयास है। बच्चन जी के विचार इस संदर्भ में द्रष्टव्य हैं - 'मैं, अनुवाद को यदि मौलिक प्रेरणाओं से एकात्मक होकर किया गया हो, मौलिक सृजन से कम महत्त्व नहीं देता। अनुभवी ही जानते हैं कि अनुवाद मौलिक सृजन से अधिक कितना कठिन-साध्य होता है। मूल कृति से रागात्मक सम्बन्ध जितना अधिक होगा, अनुवाद का प्रभाव उतना ही बढ़ जाएगा। वस्तुत: सफल अनुवादक वही है जो अपनी दृष्टि भावों, कथ्य,आशय पर रखे। साहित्यानुवाद में शाब्दिक अनुवाद सुन्दर नहीं होता। एक भाषा का भाव या विचार जब अपने मूल भाषा-माध्यम को छोड़कर दूसरे भाषा-माध्यम से एकात्म होना चाहेगा तो उसे अपने अनुरूप शब्दराशि संजोने की छूट देनी ही होगी। यहीं पर अनुवादक की प्रतिभा काम करती है और अनुवाद मौलिक सृजन की कोटि में आ जाता है।" मेरा भी यही मानना है कि अनुवाद एक तरह से पुनसृजन ही है और साहित्यिक अनुवाद में अनुवाद को स्वीकार्य, पठनीय बनाने के लिए हल्का-सा फेरबदल करना ही पड़ता है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि साहित्यिक अनुवादों में सृजनात्मक तत्व की खासी भूमिका रहती है।

अनुवाद एक श्रमसाध्य और कठिन रचना-प्रक्रिया है। वह मूल रचना का अनुकरण मात्र नहीं वरन् पुनर्जन्म होता है। वह द्वितीय श्रेणी का लेखन नहीं, मूल के बराबर का ही दमदार प्रयास है। इस दृष्टि से मौलिक सृजन और अनुवाद की प्रक्रिया प्राय: एकसमान है। दोनों के भीतर अनुभूति पक्ष की सघनता रहती है। अनुवादक जब तक कि मूल रचना की अनुभूति,आशय और अभिव्यक्ति के साथ तदाकार नहीं हो जाता तब तक सुन्दर एवं पठनीय अनुवाद की सृष्टि नहीं हो पाती। इसलिए अनुवादक में सृजनशील प्रतिभा का होना अनिवार्य है। मूल रचनाकार की तरह अनुवादक भी कथ्य को आत्मसात` करता है, उसे अपनी चित्तवृत्तियों में उतारकर पुन: सृजित करने का प्रयास करता है तथा अपने अभिव्यक्ति-माध्यम के उत्कृष्ट उपादनों द्वारा उसको एक नया रूप देता है। इस सारी प्रक्रिया में अनुवादक की सृजनप्रतिभा या कारयित्री प्रतिभा मुखर रहती है। अनुवाद में अनुवादक की कारयित्री प्रतिभा के महत्व को सभी अनुवाद-विज्ञानियों ने स्वीकार किया है। इसी कारण अनुवादक को भी एक सर्जक ही माना गया है और उसकी कला को सर्जनात्मक कला। उसी प्रकार अनुवादक भी मूल कृति को पढ़कर स्पंदित होता है और अपनी उस अनुभूति (प्रतिक्रिया) को वाणी देता है। मूल रचनाकार की तरह ही अनुवादक को आत्मविलोपन कर मूल कथ्य की आत्मा से साक्षात्कार करना पड़ता है। इसके लिए उसकी सृजनात्मक प्रतिभा उसका मार्गदर्शन करती है। अनुवाद-चिंतक तीर्थ बसंतजी ने सृजनात्मक साहित्य और अनुवाद पर सुन्दर विचार व्यक्त किए हैं। वे कहते हैं -''सृजनात्मक साहित्य में और अनुवाद में अंतर है भी और नहीं भी। सृजनशील लेखक अपने भाषा चातुर्य से यथार्थ का अनुकरण करता है। उसे अपने जीवन में संसार से जो अनुभव प्राप्त होता है, उसको अपनी कला के माध्यम से अपनी भाषा में प्रस्तुत करता है और अनुवादक उसी अनुकृति का अनुकरण करता है। दोनों ही नकल करते हैं, परन्तु एक अपने भावों को भाषा में उतारता है और दूसरा अपने मन में किसी दूसरे के भावों की प्रतिक्रिया-स्वरूप उत्पन्न भावों का तर्जुमा करता है।

यह सही है कि अनुवाद पराश्रित होता है। वह नूतन सृष्टि नहीं अपितु सृजन का पुनर्सृजन होता है। इस दृष्टि से अनुवाद-कर्म को मौलिक-सृजन की कोटि में रखने के मुद्दे पर प्रश्न-चिन्ह लग जाता है। तभी कुछ विद्वान इस कर्म को 'अनुसृजन' की संज्ञा देना अधिक उचित समझते हैं। मगर चूँकि दोनों मूल सृजक और अनुवादक अनुभव, भाषा और अभिव्यक्ति-कौशल के स्तर पर एक-सी रचना-प्रक्रिया से गुजते हैं, अत: अनुवाद-कार्य को मौलिक-सृजन न सही, उसे मौलिक-सृजन के बराबर का सृजन-व्यापार समझा जाना चाहिए।

अनुवाद के अच्छे, बुरे होने के प्रश्न को लेकर कई तरह की भ्रांतियाँ प्रचलित है। आरोप यह लगाया जाता है कि मूल की तुलना में अनुवाद अपूर्ण रहता है, अनुवाद में मूल के सौन्दर्य की रक्षा नहीं हो पाती, अनुवाद दोयम दर्जे का काम है आदि- आदि। अनुवाद-कर्म पर लगाए जाने वाले उक्त आरोप मुख्यत: अनुवादक की अयोग्यता के कारण हैं। अनुवाद में मूल भाव सौन्दर्य तथा विचार सौष्ठव की रक्षा तो हो सकती है परन्तु भाषा-सौन्दर्य की रक्षा इस लिए नहीं हो पाती क्योंकि भाषाओं में रूपरचना तथा प्रयोग की रूढ़ियों की दृष्टि से भिन्नता

होती है। -- हाँ, मौलिक लेखन के बाद ही अनुवाद होता है, अत: निश्चित रूप से यह क्रम की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है। परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि गुणवत्ता की दृष्टि से भी वह दूसरे स्थान पर है। जिस प्रकार मौलिक लेखन बढ़िया भी हो सकता है और घटिया भी, उसी प्रकार अनुवाद भी घटिया - बढ़िया हो सकता है। उक्त आरोपों से अनुवाद-कार्य का महत्व कम नहीं होता। पूर्व में कहा जा चुका है कि अनुवादक दो भाषाओं को न केवल जोड़ता है अपितु उनमें संजोई ज्ञानराशि को एक-दूसरे के निकट लाता है। अनुवादक अन्य भाषा की ज्ञान-संपदा को लक्ष्य भाषा में अंतरित करने में शास्त्रीय ढंग से कहाँ तक सफल रहा है, यह उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना कि लक्ष्य भाषा के पाठकों का अनुवाद द्वारा एक नई कृति से परिचित होना है। मूल रचना का स्वल्प परिचय पूर्ण अज्ञान से बेहतर है। गेटे की वे पंक्तियाँ यहाँ पर उद्धृत करने योग्य है जिनमें उन्होंने कार्लाइल को लिखा था, 'अनुवाद की अपूर्णता के बारे में तुम चाहे कुछ भी कहो, परन्तु सच्चाई यह है कि संसार के व्यावहारिक कार्यों के लिए उसका महत्व असाधरण और बहुमूल्य है।'

अनुवाद-प्रक्रिया एवं उससे जुड़े अन्य व्यावहारिक पक्षों पर ऊपर जो चर्चा की गई है,वह अनुवाद-कला की बारीकी को वैज्ञानिक तरीके से समझने के लिए है। दरअसल, यह अनुवादक की निजी भाषिक क्षमताओं, अनुभव एवं प्रतिभा पर निर्भर है कि उसका अनुवाद कितना सटीक,सहज और सुन्दर बनता है।

संदर्भ सूचि

1. अनुवाद -प्रक्रिया, डॉ रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव
2. साहित्यानुवाद, संवाद और संवेदना, पृ. 85
3. हिन्दी पत्रिका

****

प्रा. महेश जे. वाघेला
सरकारी विनयन और वाणिज्य कोलेज
गढ़डा (स्वा.)

Copyright © 2012 - 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Knowledge Consortium of Gujarat